तबले के प्रमुख पारिभाषिक शब्द बनारस घराने के संदर्भ में

शुभम वर्मा
अतिथि प्रवक्ता–संगीत विभाग
सी0एस0जे0एम0 वि0वि0 कानपुर

सारांश

बनारस घराने की दृष्टि में प्रमुख पारिभाषिक शब्दों की परिभाषा भिन्न है, जिसे विद्यार्थियों को विदित होना आवश्यक है। टुकड़ा 'शब्द' के अर्थ के अनुसार तबले, में बजने वाले किसी भी छोटे या बड़े बोल–समूह को टुकड़ा कहा जा सकता है। बनारस घराने में विशेष रूप से बाँट बजाने की प्रथा चली आ रही है। यहाँ पर स्वतंत्र रूप से बाँट अधिक बजाया जाता है और बाँट का विस्तार क्रम, कायदा का ही रहता है। रेला के बोल इस प्रकार के होते हैं कि जिसे सरलता से द्रुत लय में बजाया जा सकता है और बोलों की पुनरावृत्ति भी होती है। किसी भी छोटे बोलों के भाग या खण्ड को बिना विस्तार किए धारा प्रवाह बजाने से एक जैसी आवाज स्थिर हो जाती है उसे 'रौ' या 'लौ' कहते हैं। मुख्यतः दादरा, कहरवा आदि में चंचल प्रकृतियुक्त की तालों में कायदे के समान रचना को लग्गी कहते हैं।

मुख्य शब्द– टुकड़ा, बाँट, रेला, लग्गी, रौ, लड़ी, बोल।

तबले के पारिभाषिक शब्दों की परिभाषा पुस्तकों में अभी तक जो भी उपलब्ध है, वह अन्य घरानें की दृष्टि से ठीक हो सकता है, परन्तु बनारस घराने की दृष्टि में प्रमुख पारिभाषिक शब्दों की परिभाषा भिन्न है, जिसे विद्यार्थियों को विदित होना आवश्यक है। अतः निम्नलिखित कुछ पारिभाषिक शब्दों पर एक दृष्टि डाली जा रही है–

टुकड़ा– टुकड़ा 'शब्द' के अर्थ के अनुसार तबले, में बजने वाले किसी भी छोटे या बड़े बोल–समूह को टुकड़ा कहा जा सकता है परन्तु यह परिभाषा केवल शब्द के अर्थ के अनुसार है जो अन्य पुस्तकों में उल्लिखित है। वास्तव में टुकड़े का क्रियात्मक स्वरूप इससे भिन्न है और प्राचीन रचनाओं की भाँति पूर्व रचित रचनाएँ ही होती हैं। इनके आधार पर आगे टुकड़ों की अनेक प्रकार से रचनाएँ हुई हैं। बनारस के 'प्राचीन टुकड़ा' का एक उदाहरण निम्नलिखित है–

तिरकिट	धेत्	धिरधिर	किटतक	तक्	क्डां	धा	कत	
×				2				
धा	धा	धा	तिरकिट	धेत्	धिरधिर	किटतक	तक्	
0				3				
क्ड़ां	धा	कत	धा	धा	धा	तिरकिट	धेत्	
×				2				
धिरधिर	किटतक	तक्	क्ड़ां	धा	कत	धा	धा	धा[1]
0				3				×

बाँट–

बनारस घराने में विशेष रूप से बाँट बजाने की प्रथा चली आ रही है। यहाँ पर स्वतंत्र रूप से बाँट अधिक बजाया जाता है और बाँट का विस्तार क्रम, कायदा का ही रहता है। यहाँ के विशेषतः बाँट ऐसे होते हैं जिसके अंतिम भाग का विस्तार किया जाता है तो वह लग्गी बन जाती है। अतः बाँट के विस्तार को लग्गी कह सकते हैं न कि लग्गी के विस्तार को बाँट। बनारस में यही मान्य है। किसी भी प्रथा का सम्मान किया जाना उचित है, इस पर कुतर्क करना उचित नहीं।

बनारस में बाँट के दो प्रकार हें– 1. स्वतंत्र बाँट (मुक्त–बाँट) 2. प्रबन्ध बाँट। स्वतंत्र बाँट को ठाह, दुगुन, चौगुन आदि लय में बजाया जाता है और कायदे की तरह विस्तार भी होता है।

प्रबन्ध बाँट में बंधन होता है, क्योंकि इस बाँट के पल्टे अर्थात् उलट–पलट किए जा सकते हैं उसके बाद इसी चलन का रेला बजाया जाता है। यह बाँट किसी न किसी छन्द पर आधारित होता है और यह जिस लय में बजाया जाता है ठीक उसकी दुगुनी लय में उसी छन्द का रेला बजाया जाता है।

बाँट का शाब्दिक अर्थ बाँटना या विभाजित करना है। दादरा, कहरवा आदि चंचल प्रकृति की तालों में प्रयुक्त लग्गी को विविध प्रकार से सुन्दरतापूर्वक विस्तारित करने को 'बाँट' कहते हैं। जिस प्रकार पलटा से कायदा, पेशकार या रेला के विस्तार का, किस्म या प्रकार से किसी ताल के ठेके के पलटे का आभास मिलता है, उसी प्रकार बाँट से लग्गी के विस्तार का संकेत मिलता है। लग्गी के समान बाँट में भी चंचलता और श्रृंगार रस का निष्पादन होना चाहिए। बाँट में भी भरी–खाली के दो पल्ले होते हैं।

जबकि बनारस घराने के तबला–वादकों में बाँट के प्रति भिन्न अवधारणा है, वे इसे लग्गी का विस्तार न मानकर स्वतंत्र रूप से स्वतंत्र तबला वादन में सर्व–प्रथम बजाते हैं। उदाहरण–

धाऽग धाऽग धादि गिन । धाति धाऽग धादि गिन ।

ताऽग ताऽग ताति गिन । धाति धाऽग धादि गिन ।[2]

रेला–

यह कायदे की रचनानुसार ही निर्मित होता है। अंतर केवल बोलों के चुनाव का होता है। रेला के बोल इस प्रकार के होते हैं कि जिसे सरलता से द्रुत लय में बजाया जा सकता है और बोलों की पुनरावृत्ति भी होती है। यद्यपि धीमी गति में रेला, कायदे की ही तरह प्रतीत होता है, परन्तु जब अति द्रुत लय में बजता है तब धारा प्रवाह चलता हुआ सुनाई पड़ता है। अतः रेला ऐसे बोलों का समूह होता है, जिसे बिना कठिनाई के अति द्रुत लय में बजाया जाना सम्भव है। यही इसकी सबसे बड़ी विशेषता होती है। रेला दो प्रकार का होता है– 1. स्वतंत्र रेला 2. कायदे से निर्मित रेला। बनारस घराने के रेले का उदाहरण निम्नवत् है–

स्वतंत्र रेला–

धाऽतिर घेड़नग दिनतक धाऽतिर। घेड़नग दिनतक ताऽतिर किटतक।

×

2

ताऽतिर केड़नक तिनतक ताऽतिर। घेड़नग दिनतक धाऽतिर किटतक।

0

3

कायदे से निर्मित रेला

धिरधिर किटतक धाऽतिर किटतक। तिरतिर किटतक ताऽतिर किटतक।

×

2

तिरतिर किटतक ताऽतिर किटतक। धिरधिर किटतक धाऽतिर किटतक।[3]

0

3

रौ या लौ –

किसी भी छोटे बोलों के भाग या खण्ड को बिना विस्तार किए धारा प्रवाह बजाने से एक जैसी आवाज स्थिर हो जाती है उसे 'रौ' या 'लौ' कहते हैं। वे छोटे बोल रेला, बाँट, ठेका आदि

किसी के भी हो सकते हैं। बनारस में लौ कहने का प्रचलन भी था, क्योंकि बनारस के प्राचीन कलाकार बनारस के लोकभाषा में लौ शब्द का भी प्रयोग करते हैं। जिस प्रकार दीपक बिना हिले एक जैसा जलता है तो उसे कहा जाता है कि यह दीपक एक लौ में जल रहा है। इसी का आधार लेकर 'लौ' शब्द का प्रयोग हुआ है। अन्यत्र रौ कहा जाता है।

कभी–कभी पूरे रेले के बोलों को भी बिना विस्तार किए वादन करने से 'रौ' कायम होता है। परन्तु स्वतंत्र वादन में रेला, रौ की भाँति प्रयुक्त होता है।

स्वतंत्र रेला की तरह स्वतंत्र रौ भी होता है। दोनों का उदाहरण निम्नलिखित है–

1. **स्वतंत्र रौ–** तकतिंऽ किटतक तकधिंऽ किटतक

2. **रेला के भाग द्वारा निर्मित रौ–** धिरधिर किटतक धाऽतिर घेड़नग।[4]

लग्गी

मुख्यतः दादरा, कहरवा आदि में चंचल प्रकृतियुक्त की तालों में कायदे के समान रचना को लग्गी कहते हैं। यह लोक लय–ताल वाद्यों की विशेष वादन–सामग्री है। ठुमरी–गायन के साथ लग्गी वादन में भी खूब प्रगति हुई। इसका प्रयोग ठुमरी, गजल, लोक–गीत, भाव–संगीत, आदि श्रृंगारिक गायन शैलियों के साथ खूब किया जाता है। कभी–कभी तबला–वादक अपने सोलो–वादन में भी इसका प्रयोग करते हैं क्योंकि इससे साधारण श्रोता भी सहज ही आकृष्ट हो जाते हैं। कायदे की भांति लग्गी में भी खाली–भरी के बराबर–बराबर के दो पल्ले होते हैं। इसके विस्तार को 'बाँट' कहते हैं और किसी बाँट को रेले की भाँति द्रुत लय में बजाकर कायम रखने को 'लड़ी' कहते हैं। लग्गी–वादन का आनन्द तबले के अतिरिक्त ढोलक, नाल, नक्कारा, दुक्कड़ आदि वाद्यों पर भी खूब आता है। कहरवा ताल में बनारस घराने की लग्गी का एक उदाहरण–

धाती धाऽग धादि गिन । ताती ताऽग धादि गिन ।[5]

संदर्भ सूची–

1. पं0 छोटे लाल मिश्र, तबला ग्रन्थ, पृ0 80।
2. आचार्य गिरीश चन्द्र श्रीवास्तव, ताल कोश, पृ0 224।
3. पं0 छोटे लाल मिश्र, ताल प्रबन्ध, पृ0 82।
4. पं0 छोटे लाल मिश्र, ताल प्रबन्ध, पृ0 85।
5. आचार्य गिरीश चन्द्र श्रीवास्तव, ताल कोश, पृ0 290।